अक़ायेद

तक़लीद का परिचय : संक्षेप में

तक़लीद[1] के अहकाम

हर मुसलमान के लिए ज़रूरी है कि वह ऊसूले दीन को अक़्ल के ज़रिये समझे क्योंकि ऊसूले दीन में किसी भी हालत में तक़लीद नही की जा सकती, यानी यह नही हो सकता कि कोई इंसान ऊसूले दीन में किसी की बात सिर्फ़ इस लिए माने कि वह ऊसूले दीन को जानता है। लेकिन अगर कोई इंसान इस्लाम के बुनियादी अक़ीदों पर यक़ीन रख़ता हो और उनको ज़ाहिर भी करता हो तो चाहे उसका यह इज़हार उसकी बसीरत की वजह से न हो तब भी वह मुसलमान और मोमिन है। लिहाज़ा इस मुसलमान पर इस्लाम और ईमान के तमाम अहकाम जारी होंगे। लेकिन "मुसल्लमाते दीन"[2] को छोड़ कर दीन के बाक़ी अहकाम में ज़रूरी है कि या तो इंसान ख़ुद मुजतहिद हो, (यानी अहकाम को दलील के ज़रिये ख़ुद हासिल करे) या किसी मुजतहिद की तक़लीद करे या फ़िर एहतियात के ज़रिये इस तरह अमल करे कि उसे यह यक़ीन हासिल हो जाये कि उसने अपनी शरई ज़िम्मेदारी को पूरा कर दिया है। मसलन अगर चन्द मुजतहिद किसी काम को हराम क़रार दें और चन्द दूसरे मुजतहिद कहें कि हराम नही है तो उस काम को अंजाम न दे, और अगर कुछ मुजतहिद किसी काम को वाजिब और कुछ मुसतहब माने तो उस काम को अंजाम दे। लिहाज़ा जो शख़्स न तो ख़ुद मुजतहिद हो और न ही एहतियात पर अमल कर सकता हो उस पर वाजिब है कि किसी मुजतहिद की तक़लीद करे।

(म.न. 2) दीनी अहकाम में तक़लीद का मतलब यह है कि किसी मुजतहिद के फ़तवे पर अमल किया जाये। और यह भी ज़रूरी है कि जिस मुजतहिद की तक़लीद की जाये वह मर्द, आक़िल, बालिग़, शिया इस्ना अशरी, हलाल ज़ादा, ज़िन्दा और आदिल हो। आदिल उस शख़्स को कहा जाता है जो तमाम वाजिब कामों अंजाम देता हो और तमाम हराम कामों को तर्क करता हो और आदिल होने की निशानी यह है कि वह ज़ाहेरन एक अच्छा शख़्स हो और अगर उसके महल्ले वालों या पड़ौसीयो या उसके साथ उठने बैठने वालों से उसके बारे में पूछा जाये तो वह उसकी अचछाई की तसदीक़ करें।

अगर इस बात का थोड़ा सा भी इल्म हो कि दर पेश मसाइल में मुजतहिदों के फ़तवे एक दूसरे से मुख़्तलिफ़ हैं तो ज़रूरी है कि उस मुजतहिद की तक़लीद की जाये जो "आलम" हो यानी अपने ज़माने के दूसरे मुजतहिदों के मुक़ाबले में अहकामें इलाही को समझने की ज़्यादा सलाहियत रख़ता हो। से

---

[1] किसी मुजतहिद के फ़तवे पर अमल करना।

[2] वह ज़रूरी और क़तई अमूर जो दीने इस्लाम के ऐसे जुज़ हैं जिनको अलग नही किया जाकता और जिन्हे तमाम मुसलमान दीन का लीज़मी जुज़ मानते हैं जैसे नमाज़, रोज़े का फ़र्ज़ और उनका वाजिब होना। इन अमूर को ज़रूरियाते दीन और क़तईयाते दीन भी कहते है। क्योंकि यह वह अमूर हैं जिनका तस्लीम करना दायर-ए- इस्लाम में रहने के लिए ज़रूरी है।

(म.न. 3)मुजतहिद और आलम की पहचान के तीन तरीक़े हैं।

क- इंसान ख़ुद साहिबे इल्म हो और मुजतहिद व आलम को पहचान ने की सलाहियत रखता हो।

ख- दो ऐसे शख़्स जो आलिम व आदिल हों और मुजतहिद व आलम के पहचान ने का मलका भी रख़ते हों अगर किसी के आलम व मुजतहिद होने की तस्दीक़ करें इस शर्त के साथ कि दूसरे दो आलिम व आदिल शख़्स उनकी बात की काट न करे। और किसी का आलम व मुजतहिद होना एक क़ाबिले एतेमाद शख़्स की गवाही से भी साबित हो जाता है।

ग- कुछ आलिम अफ़राद (अहले ख़ुबरा) जो मुजतहिद और आलम को पहचान ने की सलाहियत रखते हों, किसी के आलम व मुजतहिद होने की तसदीक़ करें और उनकी तसदीक़ से इंसान मुतमइन हो जाये।

* (म.न. 4) अगर दर पेश मसाइल में दो या दो से ज़्यादा मुजतहिदों के इख़्तलाफ़ी फ़तवे मुख़तसर तौर पर मालूम हों और बाज़ के मुक़ाबिल बाज़ का आलम होना भी इल्म में हो लेकिन अगर आलम की पहचान आसान न हो तो अहवत [3] यह है कि इंसान तमाम मसाइल में उनके फ़तवों जितना हो सके एहतियात करे। (यह मसला बहुत तफ़सीली है और यह इसके बयान का मक़ाम नही है।) और इस ऐसी सूरत में जबकि एहतियात मुमकिन न हो तो ज़रूरी है कि उस मुजतहिद के फ़तवे के मुताबिक़ अमल करे जिसके आलम होने का एहतेमाल दूसरे के मुक़ाबले में ज़्यादा हो। और अगर दोनों के आलम होने का एहतेमाल बराबर है तो फ़िर इख़्तियार है। (जिसके फ़तवे पर चाहे अमल करे।)

(म.न. 5) किसी मुजतहिद के फ़तवे को जानने के चार तरीक़े हैं।

क- ख़ुद मुजतहिद से उनका फ़तवा सुने।

ख- दो ऐसे आदिल अशख़ास से सुनना जो मुजतहिद का फ़तवा बयान करें।

ग- मुजतहिद के फ़तवे को किसी ऐसे शख़्स से सुनना जिस की बात पर इतमिनान हो।

घ- मुजतहिद की किताब (मसलन तौज़ीहुल मसाइल) में पढ़ना एस शर्त के साथ कि उस किताब के सही होने के बारे में इतमिनान हो।

(म.न. 6) जब तक इंसान को मुजतहिद के फ़तवे के बदले जाने का यक़ीन न हो जाये किताब में लिखे फ़तवे पर अमल कर सकता है और अगर फ़तवे के बदले जाने का एहतेमाल पाया जाता हो तो छान बीन करना ज़रूरी नही है।

---

[3] एहतियात के मुताबिक़

(म.न. 7) अगर मुजतहिदे आलम कोई फ़तवा दे तो उनका मुक़ल्लिद [4] इस मसले के बारे में किसी दूसरे मुजतहिद के फ़तवे पर अमल नही कर सकता। जब तक वह मुजतहिदेव आलम फ़तवा न दे बल्कि यह न कहे कि एहतियात इसमें है कि यूँ अमल किया जाये मसलन एहतियात[5] इसमें है कि नमाज़ की पहली और दूसरी रकअत में सूरए अलहम्द के बाद एक और पूरी सूरत पढ़े, तो मुक़ल्लिद को चाहिए कि या तो इस एहतियात पर जिसे एहतियाते वाजिब [6] कहते है अमल करे या किसी दूसरे ऐसे मुजतहिद के फ़तवे पर अमल करे जिसकी तक़लीद जायज़ हो। बस अगर वह (दूसरा मुजतहिद) फ़क़त सूरए अलहम्द को काफ़ी समझता है हो तो दूसरे सूरह को छोड़ सकता है। जब मुजतहिदे आलम किसी मसले के बारे में कहे कि महल्ले ताम्मुल [7] या महल्ले इशकाल [8] है तो उसका हुक्म भी यही है।

(म.न. 8) अगर मुजतहिदे आलम किसी मसले के बारे में फ़तवा देने के बाद या इस से पहले एहतियात लगाये मसलन यह कहे कि नजिस बरतन कुर पीनी में एक मर्तबा धोने से पाक हो जाता है अगरचे एहतियात यह है कि तीन बार धोया जाये तो मुक़ल्लिद ऐसी एहतियात को छोड़ सकता है। इस क़िस्म की एहतियात को एहतियाते मुस्तहब[9] कहते हैं।

* (म.न. 9)इंसान जिस मुजतहिद की तक़लीद करता है अगर वह मर जाये तो जो हुक्म उसकी ज़िन्दगी में था वही हुक्म उसके मरने के बाद भी है। इस बिना पर अगर मरहूम मुजतहिद, ज़िन्दा मुजतहिद के मुक़ाबिल में आलम था तो वह शख़्स जिसे दर पेश मसाइल में दोनों मुजतहिदों के दरमियान के इख़तलाफ़ का अगर इजमाली तौर पर भी इल्म हो तो उसके लिए ज़रूरी है कि मरहूम मुजतहिद की तक़लीद पर बाक़ी रहे। और अगर ज़िन्दा मुजतहिद आलम हो तो फिर जिन्दा मुजतहिद की तरफ़ रुजूअ करना जरूरी है। इस मसले में तक़लीद से मुराद मुऐयन मुजतहिद के फ़तवे की पैरवी करने (क़स्दे रुजूअ) को सिर्फ़ अपने लिए लाज़िम क़रार देना है न कि उसके हुक्म के मुताबिक़ अमल करना।

(म.न. 10) अगर कोई शख़्स किसी मसले में एक मुजतहिद के फ़तवे पर अमल करे, फिर उस मुजतहिद के मर जाने के बाद वह उसी में ज़िन्दा मुजतहिद के फ़तवे पर अमल कर ले तो अब उसे इस बात की इजाज़त नही है कि वह दुबारा मरहूम मुजतहिद के फ़तवे पर अमल करे।

---

[4] तक़लीद करने वाला

[5] अमल का वह तरीक़ा जिससे "अमल" के मुताबिक़े वाक़ेअ होने का यक़ीन हासिल हो जाये।

[6] वह हुक्म जो एहतियात के मुताबिक़ हो और फ़क़ीह ने उसके साथछ फ़तवा न दिया हो, ऐसे मसाइल में मुक़ल्लिद उस मुजतहिद की तक़लीद कर सकता है जो आलम के बाद इल्म में सबसे बढ़ कर हो।

[7] एहतियात करना चाहिए(मुक़ल्लिद इस मसले में दूसरे मुजतहिद की तरफ़ रुजूअ(सम्पर्क) कर सकता है इस शर्त के साथ कि मिजतहिद ने एहतियात के साथ फ़तवा न दिया हो।)

[8] इस में इश्काल है यानी इस अमल का सही और कामिल होना मुश्किल है। (मुक़ल्लिद इस मसले में किसी दूसरे मुजतहिद की तरफ़ रुजूअ कर सकता है। इस शर्त के साथ कि मुजतहिद ने फ़तवा न दिया हो)

[9] फ़तवे के अलावा एहतियात इस लिए इस पर अमल ज़रूरी नही होता।

(म.न. 11) जो मसाइल इंसान को अक्सर पेश आते हैं उनको याद करना वाजिब है।

* (म.न. 12) अगर किसी शख़्स के सामने कोई ऐल्सा मसला पेश आजाये जिसका हुक्म उसे मालूम न हो तो उसके लिए लाज़िम है कि एहतियात करे या उन शर्तों के साथ तक़लीद करे जिन ज़िक्र ऊपर हो चुका है। लेकिन अगर उसे इस मसले में आलम के फ़तवे का इल्म न हो और आलम व ग़ैरे आलम की राय के मुख़्तलिफ़ होने का थोड़ा इल्म भी हो तो ग़ैरे आलम की तक़लीद जायज़ है।

*(म.न. 13) अगर कोई शख़्स किसी मुजतहिद का फ़तवा किसी दूसरे शख़्स को बताये और इसके बाद मुजतहिद अपने फ़तवे को बदल दे तो उसके लिए ज़रूरी नही है कि वह उस शख़्स को फ़तवे के बदले जाने के बारे में आगाह करे। लेकिन अगर फ़तवा बताने के बाद यह महसूस करे कि (शायद फ़तवा बताने में) ग़लती हो गई है और अगर इस बात का अंदेशा हो कि इस इत्तला की बिना पर वह शख़्स अपनी शरई ज़िम्मेदारी के ख़िलाफ़ अमल अंजाम देगा तो एहतियाते लाज़िम[10] की बिना पर जहाँ तक हो सके उस ग़लती को दूर करे।

(म.न. 14) अगर कोई मुकल्लफ़[11] एक मुद्दत तक किसी की तक़लीद किये बिना आमाल अंजाम देता रहे लेकिन बाद में किसी मुजतहिद की तक़लीद कर ले तो इस सूरत में अगर मुजतहिद उसके गुज़िश्ता आमाल के बारे में हुक्म लगाये कि वह सही है तो वह सही तसव्वुर किये जायेंगे वरना बातिल शुमार होंगे।

[10] एहतियाते वाजिब का दूसरा नाम।

[11] वह शख़्स जिस पर शरई तकालीफ़ लागू हों।